श्री आनंद कल्याण

वि.सं. २०७३ - जेठ वद - ६ • दि. २८ मई, २०१६ • अंक-३

3

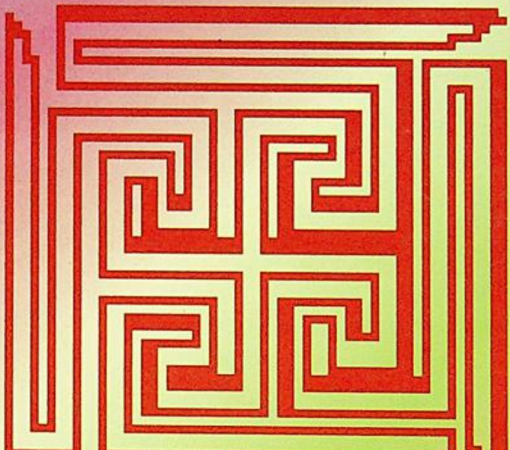

शेठ आणंदजी कल्याणजी

अहमदाबाद

श्री शत्रुंजय तीर्थाधिपति

श्री आदिनाथ दादा की ५००वीं सालगिरह

के उपलक्ष में

MISSION 500
SUVARNA MAHOTSAV CELEBRATION

शेठ आणंदजी कल्याणजी पेढी

द्वारा आयोजित

"सुवर्ण महोत्सव सर्व साधारण फंड"

निमित्त : ४८५वीं सालगिरह का अवसर
संवत २०७२ वैशाख वद-६. दिनांक २८-०५-२०१६ शनिवार

आज से १५ साल बाद आनेवाले
सुवर्ण महोत्सव में हमारा लाभ क्यों ना हो ?

लाभ लेने का सुवर्ण अवसर

५००वीं सालगिरह का प्रसंग

संवत २०८७ वैशाख वद-६. सोमवार दिनांक १२-०५-२०३१

बस ! आज से सिर्फ १ रुपया प्रति दिन दादा के नाम !

१ साल के रु. ३६०, १५ साल के रु.५४००.

विशेष जानकारी हेतु सम्पर्क करें।

हेल्प लाईन नंबर : +91-93 75 500 500, +91-93 76 500 500

info@anandjikalyanjipedhi.org | www.anandjikalyanjipedhi.org

Social Presence

ડાઉનલોડ કરો Anandji Kalyanji Pedhi App

"श्री आनंद कल्याण" (त्रिमासिक पत्र)

(धार्मिक धर्मादा ट्रस्ट रजि नं. ए-१२९९/अहमदाबाद)

वर्ष : २ अंक : ३ कींमत : ₹ २० वार्षिक शुल्क : ₹ १००

अन्य तीर्थेषु पद् यात्रा
शतैः पुण्यं भवेन् नृणाम् ।
तदेक यात्राया पुण्यं
शत्रुंजयगिरौ स्फुटम् ॥

अन्य तीर्थों की सो-सो बार की हुई
यात्रा जो पुण्य संचित होता है,
शत्रुंजय गिरिराज की एक यात्रा करने से
उतने पुण्य की प्राप्ति होती है ।

(सित्तुंजकप्पो-गाथा-३०)

अट्ठावय सम्मेत चंपा पावई उज्जितनगे य ।
वंदिता पुण्णफलं सयगुणियं होई पुंडरीए ॥

अष्टापद, सम्मेतशैल, चंपापुरी, पावापुरी
उज्जयंतगिरि को वंदन करने से जो
फल प्राप्त होता है, उससे सो गुना फल
पुंडरीकगिरि (शत्रुंजय गिरि)को वंदन करने से मिलता है ।

(सित्तुंजकप्पो०गाथा-८)

: प्रकाशक :

शेठ आणंदजी कल्याणजी

श्रेष्ठी लालभाई दलपतभाई भवन,
२५, वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड, पालडी, अहमदाबाद-३८० ००७.

श्री आनंद कल्याण (त्रैमासिक पत्र)

वर्ष : २ | अंक : ३

प्रकाशन

वि.सं. २०७३, जेठ वद-६ • ता. : २८-०५-२०१६, शनिवार

प्रकाशक

महेन्द्र शाह (जनरल मेनेजर)

शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट

श्रेष्ठी लालभाई दलपतभाई भवन,

२५, वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड़, पालडी, अहमदाबाद-३८०००७

दूरभाष : 26644502 – 26645430

E-mail : shree_sangh@yahoo.com / info@anandjikalyanjipedhi.com

मुद्रक :

नवनीत प्रिन्टर्स (निकुंज शाह) मोबाईल : ९८२५२६११७७

आणंदजी कल्याणजी पेढी की वेबसाईट का नाम बदल गया है ।

अब यह वेबसाई www.anandjikalyanjipedhi.org टाइप करने से खुलेगी ।

पेढी की मोबाईल एप [Mobile App] भी तैयार हो चुकी है । एन्ड्रोईड (Android) एवं एप्पल (Apple) दोनों प्लेटफोर्म पर से डाउनलोड़ की जा सकेगी ।

E–mail : info@anandjikalyanjipedhi.org

Social Presence

Download :Anandji Kalyanji Pedhi App

जय शत्रुंजय ! जय आदिनाथ !

स्वनाम धन्य कर्मासाह के द्वारा वि.सं. १५८७, इस्वीसन् १५३१ में शत्रुंजय गिरिराज का १६ वाँ उद्धार संपन्न हुआ। इस वर्ष यानी वि.सं. २०७३, जेठ वद ६ शनिवार, २८-५-२०१६ के दिन ४८५ वाँ प्रतिष्ठा दिन मनाया जाएगा। पर बराबर १५ वर्ष पश्चात् वि.सं. २०८७, जेठवद ६, १२-५-२०३१ के दिन ५०० वाँ प्रतिष्ठा दिन आएगा। वो दिन... वो समय... अनूठा होगा। उन दिन का महोत्सव अपने आप में अद्भूत होगा।

श्रद्धा भक्ति एवं समर्पण का पूरा समंदर तब लहरा उठेगा शत्रुंजय गिरिराज के प्रत्येक शिखर पर !

सेंकडों की संख्या में आचार्यभगवंत, मुनि भगवंत, साध्वीजी महाराज और हजारों की संख्या में श्रावक श्राविका और लाखों की संख्या में दादा आदिनाथ के साथ श्रद्धा और भक्ति की डोर से बंधे हुए लाखों भक्तजन उन दिनों पालीताणा की पुण्य धरा पर डेरा डाले बैठे होंगे।

तलेटी से दादा की टूंक, नौ टूक, घेटीपाग, सिद्धवड़, भाडवा की पहाडी, सभी जगहों पर मानव सेलाब उमड़ा होगा। उस नजारों के जो देख पाएंगे वे भी किस्मतवाले होंगे। देवो को भी दुर्लभ उस दिन जो दादा के दरबार में भक्ति करेंगे वे बड़भागी होंगे।

वह मौका, प्रसंग... वह रंग, सुकृत संचय के वे क्षण ! उन सब के हिस्सेदार बनने के लिए आज ही आगे आयें।

'सुवर्ण उत्सव सर्व साधारण फंड' में छोटा सा पर संगीन हिस्सा देकर अक्षय और अविनाशी पुण्यानुबंधी पुण्य के उपार्जक बनिए।

आणंदजी कल्याणजी पेढी के प्रमुख श्री संवेगभाई लालभाई के द्वारा पालीताना में आयोजित नौ दिवसीय श्रमण सम्मेलन के प्रारंभ दिवस (दिनांक : २६-३-२०१६) पर दिया गया वक्तव्य

परम पूज्य गच्छाधिपति आचार्य भगवंत, पूज्य आचार्य भगवंत,
पूज्य पदस्थ मुनि भगवंत और मुनि भगवंत
एवम् श्री संघ के मेरे साधार्मिक भाईयों ।

सम्मेलन के इस शुभ प्रसंग पर आप सभी को वंदन एवम् अभिनंदन पूर्वक स्वागत करते हुए मुझे बडी खुशी होती है ।

शाश्वत तीर्थ शत्रुंजय गिरिराज और आदीश्वर दादा की छत्र छाया में हजारो पूज्य साधु-साध्वीजी एवम् लाखों श्रावक-श्राविकाएं और श्रद्धालु भक्तजनों के पावन चरणों से समृद्ध धरती पर इस श्रमण प्रमुख चतुर्विध संघ का मिलन सम्मेलन के रुप में शायद पहली बार हुआ है । यह पल धन्य है । यह क्षण पुण्यवती है ।

वीतराग सर्वज्ञ परमात्मा श्रमण भगवान महावीर के मार्ग को समर्पित त्यागी-वैरागी-श्रमण श्रमणी भगवंत एवम् बडी मात्रा में उपस्थित इस सकल श्री संघ को देखकर हृदय आनंदित हो उठता है । ऐसा द्रश्य भी महान पुण्योदय से देखने को मिलता है ।

समग्र जिनशासन के संचालन की जिम्मेदारी तीर्थंकर भगवंतो की अनुपस्थिति में 'तित्थियर समो सूरि' जैसे पंचाचार को समर्पित, छत्तीस गुणों से अलंकृत आचार्य भगवंतो के शिर पर है । उनके असीम शास्त्र ज्ञान, गहरे आत्मज्ञान एवम् उच्च त्याग-तपोमय व्यक्तित्व के आगे हम बालक के समान लगते है । फिर भी कुछ धृष्टता कर के भी मन की बातें करने का साहस

कर रहा हूं ।

चतुर्विध संघ के हर एक विभाग में परस्पर वात्सल्य भाव, प्रेमभाव, मैत्रीभाव बढे यह आज की बडी आवश्यकता है । हमारी आपसी असहनशीलता हमें कई क्षेत्रो में पीछे धलेकती है । कमजोर साबित करती है । प्रश्न कई है । सकल श्री संघ आप सभी की और से समुचित मार्गदर्शन की ईच्छा रखता है ।

तीर्थों के संरक्षण, व्यवस्थापन, कुछ स्थानों में कानूनी विवाद, कुछ स्थानों में संचालन के प्रश्न, कुछ स्थानो में सकल श्री संघ की उपेक्षा कर के व्यक्तिगत प्रभाव और सामर्थ्य के जोर पर नुकसान हो ऐसी प्रवृत्तियां । इस सब के लिये कुछ सोचना पड़ेगा ।

श्री संघ के संचालन में अनुभव, प्रौढ़ता, परिपक्वता एवम् दीर्घदर्शिता के अभाव में व्यक्तिगत अनबन से क्षुब्ध वातावरण दूर हो यह आवश्यक है । श्री संघ में, सम्यग्दर्शन के आचार उपबृहंणा-अनुमोदना को बढाने की काफी आवश्यकता है । जिससे परस्पर सद्भाव एवम् प्रमोदभाव बढे ।

चतुर्विध संघ के विभिन्न कार्य, जिम्मेदारियां, आयोजन, अनिवार्य प्रवृत्तियां इत्यादि के लिये साधारण द्रव्य की हंमेशा कमी रहती है ।

संघ की विभिन्न संस्थाओं को एक दूसरे के प्रतिस्पर्धी नहीं किन्तु एक दूसरे के पूरक बन कर चलना चाहिए । जो संघ की एकवाक्यता के लिए अति आवश्यक है ।

श्री संघ के कमजोर क्षेत्रों को सक्षम् एवम् समृद्ध बनाने हेतु सफल आयोजन करने का समय सामने खडा है ।

साधारण द्रव्य के फंड हेतु सभी को योगदान देना होगा । आप पूज्य को इसके लिये शास्त्रोचित एवम् समयोचित प्रेरणा भी करनी होगी । मार्गदर्शन देना होगा । आज धर्मद्रव्य व्यवस्था बदलने की आवश्यकता नहीं है, गुरुदेवों

की और से सकल श्री संघ को प्रेरणा दे कर कमजोर क्षेत्रों की और दान बढे, वैसी प्रवृत्तिओं में लाभ लेने की प्रेरणा देनी होगी ।

प्रभु शासन के पुण्योदय से त्याग-वैराग्य के मार्ग की अपूर्व महिमा आज के विलासी एवम् भौतिकता में मचलते युग में भी काफी बढी है, इसके लिये हम ही नहीं समग्र विश्व आश्चर्यचकित हो रहा है। पर साथ ही श्रमण-श्रमणी संघ के योगक्षेत्र के लिये, आराधना-साधना और अध्यात्म के विकास के लिये विहारो में हो रहे अकस्मात इत्यादि अनेक प्रश्नों के समाधान खोजने होंगे । साध्वीजी वर्ग की सुरक्षा के बारे में भी अनदेखी नहीं की जा सकती।

अन्य समाज के साथ परस्पर आदरभाव, सहृदयता और सहअस्तित्व की भावना जागृत करनी होगी । संघर्ष का रास्ता नुकसानकर्ता होगा, ऐसा मेरा विनम्र मंतव्य है । अन्य सम्प्रदाय, गच्छ, वर्ग एवम् समूह के साथ कुछ ज्यादा सहिष्णुता रखनी होगी । बात बात पर या आये दिन आमने सामने हो जाने की मनोवृत्ति नुकसानकर्ता और मेरे नजरिये से आत्मघाती सिद्ध होगी ।

समाज के अन्य वर्ग के साथ संवादिता, समझ और समादर पूर्ण व्यवहार के लिये सक्षम श्रावक वर्ग, मजबूत श्रेष्ठि परम्परा, महाजन परम्परा को पुनर्जीवीत करनी होगी । उसे सुद्रढ भी बनानी होगी ।

हमारे पास ज्ञानी-ध्यानी, त्यागी, तपस्वी एवम् होनहार शासन प्रभाव आचार्य भगवंत, मुनि भगवंत और श्रमणी भगवंत की उत्कृष्ट परम्परा रही है। ऐसी ही शासन को समर्पित, संघ वात्सल्य और संघभक्ति से भरे व्यक्तित्ववाले राजा, मंत्री और श्रेष्ठिओं की भी बडी परम्परा रही है। ऐसे कई श्रावकश्रेष्ठ के अवतार आज के हमारे श्री संघ में तैयार करने होंगे । निसंदेह प्रभु का शासन अविच्छिन्न रहेगा ही, फिर भी उसमें हमे भी ठोस योगदान देना होगा।

इन सभी महानुभावों ने शासन भक्ति के साथ तत्कालीन समाज के सभी वर्गों के हृदय जीत कर, उनके दुःखदर्द एवम् प्रश्नों के सहभागी बन कर महाजन का गौरवशाली मान प्राप्त किया था । उचित स्थान बनाया था । समाज के सभी वर्गों के साथ आदर-मान एवं सहअस्तित्व के भाव के साथ ही पारस्परिक सहिष्णुता कायम होगी ।

किसी भी प्रश्न पर खुलेआम सरकार के सामने आ जाने से समाधान की जगह परेशानी बढेगी । आपस में बातचीत के माध्यम में प्रश्न हल करना ज्यादा उचित रहेगा ।

समझदार वर्ग दूर होता जा रहा है, इसके अलावा हमारे लम्बे कार्यक्रम, बहुमान के प्रसंग, प्रसंगो में अनावश्यक धन राशि का व्यय होना इत्यादि, उसकी जगह अनुकंपा, जीवदया, प्राणीदया, मानव करुणा के झरने बहाने की अति आवश्यकता है । कहीं ये झरनें सूख न जाय । दंभ, अनबन और प्रदर्शन की वृत्ति के रेगिस्तान में शोषित ना हो जाय, यह देखना होगा ।

आज श्रावक-श्राविका की समर्पितता का मापदंड उनके द्रव्य के व्यय पर होता है । तो क्या जो श्रावक-श्राविका अपने पास कम लक्ष्मी के कारण द्रव्य का व्यय ना कर सके तो उनकी समर्पितता कम मानी जायेगी ? यहाँ हमें शत्रुंजय के जीर्णोद्धार में भीमा कुंडलीया का दृष्टांत याद करना चाहिए।

जिनप्रतिमाजी को निर्माण में नवप्रयोगों के नाम पर कई ऐसे प्रयोग हो रहे है जो प्राचीन शिल्प-स्थापत्य की अवधारणा को नुकशानकर्ता होगी। लांछन पर ही सीधे प्रतिमाजी बिराजमान कराने से सामान्य व्यक्ति को वह लांछन की जगह प्रभु का वाहन लगेगा ।

जीर्णोद्धार के नाम से प्राचीन कला स्थापत्य का नाश करके, परम्परागत विरासत का नाश कर के सब कुछ नया कर देने के प्रयत्नों से प्राचीनता, ईतिहास, सबूत काफी कुछ नष्ट हो जायेगा । स्थापत्य के अवशेष, परमात्मा एवं देव-देविओं के बिंब, ज्ञान के ग्रंथ, पट, छोड (चंदरवा, पिछवई) उपकरण

सब सुशोभन के रुप में करोडों के दाम पर आज देश में एवं देश के बहार बेचे गये है और अच्छी खासी आशातना हो रही है । ऐसा भविष्य में ना हो उसके लिये खास ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है और आपका मार्गदर्शन श्री संघ को देना आवश्यक है ।

प्राचीन तीर्थभूमिओं, कल्याणकभूमिओं के नाम पर शहरों के पास या हाईवे पर या अन्य स्थल पर मंदिर व तीर्थ बनाने से भविष्य की पीढी को वास्तविक तीर्थों के लिये भ्रांति पैदा होगी जो शायद नुकशानकर्ता बन जाएगी ।

हर एक छोटी-बडी संस्थाएं, समूह, मंडल, ग्रुप वगैरह वाकई अपने अपने तरीके से कार्य करें किन्तु चतुर्विध संघ की मर्यादा का तो अबाधित रुप से स्वीकार करना ही होगा । संघ व्यवस्था गौण बन कर ना रह जाय, यह देखना होगा । व्यक्तिगत बडे कार्यक्रम, अनुष्ठान ईत्यादि उक्त शहर या गाँव के स्थानीय संघ को गौण बना दे, यह उचित नहीं है । संघ की व्यवस्था बनी रहे यह अति आवश्यक है ।

आप सब कई कष्ट सहन कर के भी यहाँ पधारे है, यह हम सब का प्रबल पुण्योदय है एवं गौरव का विषय है ।

फिर से एकबार चतुर्विध श्री संघ के चरणों में कोटि कोटि वंदन के साथ वीतराग की आज्ञा के विरुद्ध कुछ कह दिया हो तो **"मिच्छा मि दुक्कडं"**

आचार्यपद की महिमा

धर्मभावना विश्रुत इम छत्रीस छत्रीस
गुणधारे आचारय तेह नमुं निशदीस
आचारय आणाविण न फ्ले विद्यामंत
आचारय उपदेसे सिद्धि लहीजे तंत

(उपा. श्री यशोविजयजी कृत परमेष्ठी गीता-७८)

आणंदजी कल्याणजी पेढी के प्रमुख श्री संवेगभाई लालभाई के द्वारा पालीताना में आयोजित नौ दिवसीय श्रमण सम्मेलन के समापन दिवस (दिनांक : ३-४-२०१६) पर दिया गया वक्तव्य

परम पूज्य गच्छाधिपति आचार्य भगवंत, पूज्य आचार्य भगवंत, पूज्य पदस्थ मुनि भगवंत, पूज्य मुनि भगवंत और पूज्य साध्वीजी भगवंत एवं साधार्मिक भाईयों और बहनों ।

परम तीर्थपति श्रमण भगवान महावीरस्वामी का धर्मशासन आज भी जयवंत है इसका कारण है: चतुर्विध संघ की निष्ठा । श्रद्धा एवम् भक्तिभाव से युक्त समर्पण का भाव ।

उसमें भी पूज्य श्रमण-श्रमणी भगवंत की त्याग-तपोमय सर्वविरति मार्ग की अनन्य उपासना एवं श्रावक श्राविका रुप संघ की एवं श्रद्धालुजनों की यथाशक्य देशविरतिरुप धर्म की आराधना के बल से प्रभु का शासन जग में गूंज रहा है ।

हम सब का परम सद्भाग्य है, अपूर्व पुण्योदय है कि तपागच्छ की परम्परा के महान ज्ञानी-ध्यानी-त्यागी-तपस्वी आचार्य भगवंत जिनशासन की धुरा का वहन करते है ।

शासन को सुद्रढ बनाने के लिये समय समय पर देश-काल-पुरुष-अवस्था-राज्यसत्ता, सामाजिक परिप्रेक्ष्य ईत्यादि को विवेचित कर के सापेक्ष भाव से कल्याणकारी सूचन करते है, राह दिखाते है । वह आप पूज्यों का महान उपकार है ।

शत्रुंजयगिरि की तलेटी में, पालीताणा की पुण्यमयी धरती के आंगन में सम्मेलनरुप अपूर्व अवसर आया है । दि. २६-३-१६ से दि. २-४-१६

तक चले सम्मेलन में आप सब पूज्य साथ बैठे, सहचिंतन किया, विचारों का आदान-प्रदान किया ।

शास्त्र परम्परा, प्रणालिका एवम् वर्तमान में परिवर्तित देशकाल को सामने रख कर परम पूज्य गुरुभगवंतो ने जो निर्णय किये है, वह सम्पूर्णतः शासन के हित में ही किये है ।

परम पूज्य गुरुभगवंत तो प्रभु द्वारा दिखाये गये मार्ग पर अविरत ज्ञान-ध्यान में लीन रहते है, अपने स्वाध्याय में, तप-तितिक्षा में डूबे रहते है । शासन-संघ-समुदाय एवं अनुयायिओं के योगक्षेम को वहन करते हुए उन्होंने प्रभु के प्रति, प्रभु द्वारा दिखाये गये मार्ग के प्रति पूर्ण अहोभाव एवं सकल श्रीसंघ के प्रति अपना वात्सल्यभाव दर्शाते हुए कीमती समय दिया है, चिंतन, मनन एवम् विश्लेषण किया है ।

श्रमण संघ के समुत्थान में ही सकल संघ का उत्थान संलग्न है, यह सभी को याद रखना है ।

व्यक्तिगत तौर पर जितना हो सके उतना स्वयं पालन करें ।

व्यक्तिगत नही किन्तु संघीय बातों के पालन में सहयोगी बनें ।

जो कुछ शुभ हो रहा है, उसकी भरपुर अनुमोदना करें, किन्तु किसी गलत वाद विवाद चर्चा-टीका टीप्पणी से हंमेशा दूर रहें ।

कल दोपहर सर्वमंगल करने से पहले परम पूज्य आचार्य भगवंत पद्मसागरसूरीश्वरजी महाराज साहब ने जो बात की, उससे मुझे अति आनंद हुआ कि, "पहले की तरह जैन संघ एक बने, पहले जैसी शासन की गरिमा एवम् प्रतिभा बनी रहे, शासन प्रभावना हो", एक वाक्य में उन्होंने सब कुछ कह दिया । अन्य गुरुभगवंत जो उपस्थित थे या अनुपस्थित थे, उनका भी यही सुर था । इसके अलावा परम पूज्य पद्मसागरसूरीश्वरजी ने समग्र मूर्तिपूजक श्री संघ का सम्मेलन हो, ऐसी उमदा भावना व्यक्त की । यह है, इन सभी पूज्यों का परमात्मा एवम् उनके द्वारा प्ररुपित धर्म के प्रति अहोभाव, हृदय

की उदारता और शासन के प्रति प्रेम और भावना । इन पूज्यों को नमन करे उतने कम है ।

मेरा प्रबल पुण्योदय है कि, मुझे परमात्मा एवम् धर्म की शरण मिली और उनकी धुरा का वहन करने वाले ऐसे पूज्य गुरुभगवंतो की निश्रा, आशीर्वाद एवम् मार्गदर्शन मिले है और भविष्य में भी मिलते रहेंगे । ऐसी आशा रखता हूं ।

श्री श्रमण संघस्य शांतिर्भवतु ।
श्री सकल संघस्य शांतिर्भवतु ।

इस अवसर पर मुझे "मंगल दिये" की अंतम कडी बोलना उचित लगता है ।

"अम घेर मंगलिक तुम घेर मंगलिक
मंगलिक चतुर्विघ संघ को होजो"

जिन शासन के सर्व चतुर्विध संघ को भावपूर्वक बार बार वंदन करता हूँ । परमात्मा की आज्ञा के खिलाफ अनजाने में भी कुछ कह दिया हो तो त्रिविध त्रिविध रुप से "मिच्छा मि दुक्कडं"

'ध्याता आचारज भला
महामंत्र शुभ ध्यानी रे
पंच प्रस्थाने आतमा
आचारज होये प्राणी रे....' (श्रीपाल रास-४/१२/४)

१. विद्या पीठ २. सौभाग्य पीठ ३. लक्ष्मी पीठ
४. मंत्रराज पीठ ५. सुमेरु पीठ

सूरिमंत्र की पंच प्रस्थानमय पांचों पीठ के आराधक-साधक एवं सकल श्री संघ के योगक्षेम को वहन करनेवाले आचार्य भगवंतों को वंदना हो !

शत्रुंजय तीर्थोद्धार प्रबंध के बारे में...

शत्रुंजय महातीर्थ के प्राणस्वरुप मुख जिनालय के प्रतिष्ठाकरक महान प्रभावक एवं प्रज्ञापुरुष समर्थ जैनाचार्य श्री विद्यामंडनसूरिजी की आज्ञा से उन्ही के शिष्य पंडितप्रवर श्री विवेकधीर मुनि ने संघनायक कर्माशाह एवं शत्रुंजय महातीर्थ के जीर्णोद्धार की एक प्रशस्ति संस्कृत भाषा में 'शत्रुंजय तीर्थोद्धार प्रबन्ध' के रुप में दो विभाग में रची थी।

प्रथम वंशादिव्यावर्णन (उल्लास) विभाग में ९३ श्लोकों के माध्यम से श्री तोलाशाह एवं कर्माशाह के वंश इत्यादि के बारे में सविस्तर बताया है, श्री शत्रुंजयोद्धार व्यावर्णन नामक द्वितीय (उल्लास) विभागमें १६७ श्लोकों के जरिये तीर्थ की जीर्णोद्धार प्रक्रिया, प्रतिमा निर्वाण, प्रतिष्ठा मुहूर्त, प्रतिष्ठा प्रसंग, दान भक्ति एवं श्रद्धा के विविध आयाम दर्शाये गये है।

इत्तफाक से प्रतिष्ठा के दूसरे ही दिन (वि.स. १५८७, वैशाख वद ७ सोमवार के दिन) इसकी रचना की गयी थी। प्रबंध के परिशिष्ट में राजावली–कोष्टक एवं प्रतिष्ठा समय की लग्न कुंडली भी दी गयी है। इस समूचे प्रबंध को महान इतिहास वेत्ता एवं संशोधन क्षेत्र के महारथी मुनि जिनविजयजी ने अनूदित संपादित करके श्री जैन आत्मानंद सभा, भावनगर के द्वारा विक्रम संवत १९७३ यानी इस्वीसन् १९१७ में **'शत्रुंजय तीर्थोद्धार प्रबंध'** शीर्षक से दस आना मूल्य के साथ पुस्तक रुप में प्रकाशित किया था। उसी का सारसंक्षेप यहां प्रस्तुत है।

शत्रुंजय के १६वें (या ७वें) तीर्थोद्धार वीर कर्मासाह की कहानी

महान् तपागच्छ के रत्नाकरपक्ष की भृगुकच्छीय शाखा में पहले अनेक आचार्य हो गये है। उनमें **विजयरत्नसूरी** नामके एक प्रतिष्ठित आचार्य हुए, जिन्होनें अपनी प्रखर विद्वता से विद्वानों में सर्वत्र विजयपताका प्राप्त की थी। उनके **धर्मरत्नसूरि** नामके शिष्य हुए। जो बडे क्रियावान, विद्यावना और प्रतापी थे। उन सूरिवर्य के अनेक अच्छे अच्छे शिष्य थे, जिनमें **विद्यामंडन** और **विनयमंडन** ये दो प्रधान थे। इनमें पहले को सूरिजी ने **आचार्यपद** दिया था और दूसरे को **उपाध्यायपद**।

एक समय **धर्मरत्नसूरि** अपने शिष्यों के साथ संघपति धनराज की प्रार्थना से, आबू वगैरह तीर्थो की यात्रा के लिये उसके संघ में चले। अनेक नगरों और गांवो में, संघ के साथ बडे भारी समारोह से प्रवेश करते हुए क्रम से मेदपाट (**मेवाड**) देश में पहुंचे। भारत भामिनी के भूषण समान इस मेदपाट की क्या प्रशंसा की जाय ? पैर पैर पर जहां सरोवर, नदियाँ, वन और क्रीडापर्वत विद्यामान हैं। धन और धान से जहां के शहर समृद्धिशाली बने हुए हैं। जहां न क्लेश का लेश है और न शत्रु का प्रवेश है। न दंड की भीति है और न लोगों में अनीति हैं। न कहीं दुर्जन का वास है न कहीं दुर्व्यसन से किसी का विनाश है। इस सुंदर नगर में, जगत्प्रसिद्ध चित्रकूट (चित्तोड) पर्वत है। इस पर्वत पर उन्नत और विशाल अनेक जिनमंदिर बने हुए हैं, जिनके रणरणाट करते हुए घंटनादों से सारा पर्वत शब्दायमान हो रहा है। इस पर्वत पर अनेक साधुशालायें (उपाश्रय) बने हुए हैं, जिनमें निरन्तर अर्हदागमों का मधुर स्वर से जैनश्रमण स्वाध्याय करते रहते हैं। नगरनिवासी सभी मनुष्य आनंद और विलास में निमग्न रहते हैं। उस समय इस प्रसिद्ध

पर्वत का शासक क्षत्रियकुलदीपक **साङ्गा महाराणा** था, उस नृपश्रेष्ठ के शौर्य, औदार्य और धैर्य आदि गुणों को देखकर तथा चतुरंग सैन्य की विभूति देखकर लोक उसे नया चक्रवर्ती मानते थे।

इस **चित्रकोट** नगरमें **ओसवंश** (ओसवाल ज्ञाति) में **सारणदेव** नामक एक प्रसिद्ध पुरुष हो गया है, जो जैन नृपति **आमराज** के वंशजो में से था। उसकी वंशावली में अनेक प्रतिष्ठित नर हुए। उनमें एक नरश्रेष्ठ तोला हुआ, जिसकी सतियों में ललामभूत ऐसी लीलू नामकी प्रिय पत्नी थी। साधु तोला, महाराणा साङ्गा का परम मित्र था। महाराणा ने उसे अपना अमात्य बनना चाहा था, परंतु उसने आदरपूर्वक उसका निषेध कर केवल श्रेष्ठि पद ही स्वीकार किया। वह बडा न्यायी, विनयी, दाता, ज्ञाता, मानी और धनी था। जैन धर्म का पूर्ण अनुरागी था। उस पुण्यशाली तोलासाह के **१. रत्न, २. पोम, ३. दशरथ, ४. भोज और ५. कर्मा** नामक पांडवो के जैसे ५ पराक्रमी पुत्र हुए। इन भ्राताओं में जो सबसे छोटा कर्मासाह था, वह गुणों में सभी से बड़ा था अर्थात् वह पांचो में श्रेष्ठ और ख्यातिमान था। उसके सौन्दर्य, धैर्य, गांभीर्य और औदार्य आदि सभी गुण प्रशंसनीय थे।

धर्मरत्नसूरि और सं. धनराज का संघ मेदपाट के पवित्र तीर्थस्थलों को और प्रसिद्ध नगरों की यात्रा करता हुआ क्रमशः चित्रकोट पहुंचा। सूरिजी के साथ संघ का आगमन सुनकर महाराणा साङ्गा उनके सन्मुख गया। सूरिजी को प्रणाम कर उनका सदुपदेश श्रवण किया। बाद में, बहुत आडम्बर के साथ संघ का प्रवेशोत्सव किया और यथायोग्य सब संघजनों को निवास करने के लिये वासस्थान दिये। तोलासाह अपने पुत्रों के साथ संघ की यथेष्ट भक्ति करता हुआ सूरिजी की निरन्तर धर्मदेशना सुनने लगा। राजा भी सूरिजी के पास आता था और धर्मोपदेश सुना करता था। सूरिजी के उपदेश से सन्तुष्ट होकर, राजा ने पाप के मूलभूत शिकार आदि दुर्व्यसनों का त्याग कर दिया।

वहां पर एक **पुरुषोत्तम** नामका ब्राह्मण था, जो बड़ा गर्विष्ठ विद्वान और दूसरों के प्रति असहिष्णुता रखनेवाला था। सूरिजी ने उसके साथ, राजसभा में सात दिन तक वाद कर उसे पराजित किया। इस बात का उल्लेख एक दूसरी प्रशस्ति में भी किया हुआ है। यथा -

कीर्त्या च वादेन जितो महीयान् द्विधा द्विजो यैरिह चित्रकूटे।
जितत्रिकूटे नृपतेः समक्षमहोभिरह्नाय तुरङ्गसंख्यैः॥

एक दिन अवकाश पाकर तोलासाह ने अपने छोटे बडे बेटे कर्मासाह के साथ धर्मरत्नसूरि से भक्तिपूर्वक एक प्रश्न किया कि - 'हे भगवन् मैंने जो कार्य सोच रखा है, वह सफल होगा या नहीं, यह आप विचार कर मुझसे कहने की कृपा करें।' आचार्य महाराज उसी समय एकाग्रचित्त होकर अपने ज्योतिषशास्त्र विषयक विशेष ज्ञान द्वारा उसके चिन्तितार्थ का स्वरूप और फलाफल सोचने लगे।

संवत १३७१ में पाटन के **समरासाह** ओसवाल के द्वारा स्थापित किये हुए बिम्ब का म्लेच्छो ने मस्तक खंडित कर दिया। धर्मरत्नसूरि के पास बैठकर तोलासाह ने जिस अपने मनोरथ के सफळ होने न होने का प्रश्न किया, वह इसी विषय का था। तोलासाह के समय तक किसी ने गिरिराज का पुनरुद्धार नहीं किया था, इसलिये तीर्थपति की प्रतिमा वैसे खंडित रूप में ही पूजी जाती थी। वस्तुपाल के द्वारा भूमिगृह में रक्षित पाषाणखंड को निकालकर चतुर शिल्पियों द्वारा उनके बिम्ब बनाये जाय और वर्तमान खंडित मूर्तियों की जगह स्थापित किये जाय तो अच्छा है; यह विचार कर तोलासाह ने धर्मरत्नसूरि से अपना यह विचार सफल होगा या नहीं, इस विषय का उपर्युक्त प्रश्न किया था।

धर्मरत्नसूरिने प्रश्न का फलाफल विचार कर तोलासाह से कहा कि - 'हे सज्जन शिरोमणि। तेरे चित्त रूप क्यारे में शत्रुंजय के उद्धार स्वरूप

जो मनोरथ का बीज बोया गया है, वह तेरे इस छोटे पुत्र से फलवाला होगा। और जिस तरह समरासाह के उद्धार में हमारे पूर्वजों-आचार्यों ने प्रतिष्ठा करने का लाभ प्राप्त किया था, वैसे तेरे पुत्र-कर्मासाह के उद्धार में हमारे शिष्य प्राप्त करेंगे।' तोलासाह सूरिजी का यह कथन सुनकर हर्ष और विषाद का एक साथ अनुभव करने लगा। हर्ष इसलिये था कि, अपने पुत्र के हाथ से यह महान कार्य सफल होगा और विंषाद इसलिये था कि स्वयं यह महत्पुण्य उपार्जन न कर सका। कर्मासाह यद्यपि उस समय कुमारावस्था में हीं था, परंतु पिता की इस इच्छा के पूर्ण करने का तभी से संकल्प कर गुरुमहाराज के शुभ वचनों की ग्रंथी बांध ली।

चित्रकोट की यात्रा वगैरह करने पर संघ आगे चलने का प्रयत्न किया। तोलाशाह के आग्रह पर उसे सन्तुष्ट करने के लिये अपने शिष्य विनयमंडन नामक पाठक को वहीं पर रख दिये। सूरि संघ के साथ यात्रा के लिये प्रस्थित हो गये। विनयमंडन पाठक के समीप में तोलासाह आदि श्रावक वर्ग उपधान वगैरह तपश्चर्यादि धर्मकृत्य करने लगा। रत्नासाह आदि तोलासाह के पांचों पुत्र भी पाठक के पास षडावश्यक, नवतत्त्व और भाष्यादि धर्मग्रंथों का अभ्यास करने लगे। भाविकाल में महान कार्य करनेवाले कर्मासाह पर, अपने गुरु के कथन से उपाध्यायजी सबसे अधिक प्रेम रखने लगे। एख दिन कर्मासाह ने विनयपूर्वक विनयमंडन जी से कहा कि, 'महाराज। आपके गुरु के वचन को सत्य सिद्ध करने के लिये आपको मेरा सहायक बनना पडेगा।' उपाध्यायजी ने हँस कर मीठे वचन से कहा कि, 'महाभाग। ऐसे सर्वोत्तम कार्य में कौन सहाय करना नहीं चाहता ?' तदनन्तर कोई अच्छा अवसर देखकर उन्होंने कर्मासाह को 'चिन्तामणि महामंत्र' आराधना करने के लिये विधिपूर्वक प्रदान किया। उपाध्यायजी, कई महिने तक चित्रकोट में रहे। कर्माशाह को तीर्थोद्धार विषयक प्रयत्न में लगे रहने का वारंवार उपदेश कर

उपाध्यायजी वहां से फिर अन्यत्र विहार कर गये ।

कुछ वर्ष बाद तोलासाह अपने धर्मगुरु श्रीधर्मरत्नसूरि का स्मरण करता हुआ, न्यायोपार्जित धन को पुण्य क्षेत्रों में वितीर्ण करता हुआ और सर्व प्रकार के पापों का पश्चातापपूर्वक प्रत्याख्यान करता हुआ, स्वर्ग के सुखों का अनुभव करने के लिये इस संसार को छोड गया। पिता के विरह से सब पुत्र शोकग्रस्त हुए, लेकिन संसार के अचल नियम का स्मरण कर समय के जाने पर शोकमुक्त होकर अपने अपने व्यवहारिक कर्तव्यो का यथेष्ट पालन करने लगत्। छोटा पुत्र कर्मासाह कपडे का व्यापार करता था, जिसमें वह दिन प्रतिदिन उन्नति पाता हुआ सज्जनों में अग्रेसर गिना जाने लगा ।

धर्म और् नीति के प्रभाव से थोडे ही वर्षों में उसने क्रोडों रुपये पैदा किये। हजारों वणिक पुत्रों को व्यवहार कार्य में लगाकर उन्हें सुखी कुटुंबवाले बनाये । शीलवती और रूपवती ऐसी अपनी दोनो (कपूर एवं कमला) प्रियाओं के साथ कौटुंबिक सुख का आनंदप्रद अनुभव करता हुआ, पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र और स्वजनादि के बीच में साक्षात् इन्द्र की तरह वह साह शोभने लगा।

अहमदाबाद के स्थापक शासक अहमदशाह का प्रपौत्र बहादुरखान अपने पिता (मुजफ्फारखां) के द्वारा कम जागीर देने से नाराज होकर कितनेक नोकरों को साथ लेकर वह अहमदाबाद से मुसाफ़री करने के लिए निकला था । वह क्रम से चित्रकूट (चित्तोड) पहुंचा। वहां पर महाराणा ने उसका यथोचित सत्कार किया ।

उपर उल्लेख हो चूका है कि, कर्मासाह कपडे का व्यापार करता था। बंगाल और चीन वगैरह देश-विदेशों से करोडों रुपये का माल उसकी दुकान पर आता जाता था । इस व्यापार में उसने अपरिमित रुप में द्रव्यप्राप्ति की थी। शाहजादा बहादुरखान ने भी कर्मासाह की दुकान से बहुत सा कपड़ा खरीद किया। इससे साह की शाहजादा के साथ अच्छी मैत्री हो गई। स्वप्न

में गौत्रदेवी ने आ कर कर्मासाह से कहा कि, 'इस शाहजादा से तेरी ईष्ट सिद्धि होगी' इसलिये उसने खान-पान, वसन और प्रिय वचन से शाहजादा का बहुत सत्कार किया । बहादुरखान के पास इस समय खर्ची बिलकुल थी नहीं । इसलिये कर्मासाह ने उसे एक लाख रुपये बिना किसी शरत के मुफ्त में दिये । शाहजादा इससे अति आनंदित हुआ और साह से कहने लगा कि, 'हे मित्रवर ! जीवन पर्यंत मैं तुम्हारे इस एहसान को न भूल सकूंगा ।' इस पर कर्मासाह ने कहा कि, "आप ऐसा न कहें । आप तो हमारे मालिक है और हम आपके सेवक हैं । केवल इतनी अर्ज है कि कभी कभी इस जन का स्मरण किया करें और जब आपको राज्य मिले, तब शत्रुंजय के उद्धार करने की जो मेरी एक प्रबल उत्कंठा है, उसे पूर्ण करने हें ।' शाहजादा ने साह की इच्छा पूर्ण करने देने का वचन दिया और फिर उसकी अनुमति लेकर वहाँ से अन्यत्र गमन किया ।

इधर गुजरात में मुजफ्फरशाह की मृत्यु हो गई और उसके तक्त पर सिकन्दर बैठा । वह अच्छा नीतिवान् था, लेकिन दुर्जनो ने उसे थोडे ही दिनों में मार डाला । यह वृत्तांत जब बहादुरखान ने सुना तो वह शीघ्र गुजरात को लौटा और चांपानेर पहुंचा । वहीं संवत् १५८३ के भाद्रपद मास की शुक्ल द्वितीय और गुरुवार के दिन, मध्याह्न समय में उसका राज्याभिषेक हुआ और बहादुरशाह नाम धारण किया । बहादुरशाह ने अपने राज्य की लगाम हाथ में लेकर पहले पहले जितने स्वामीद्रोही, दुर्जन और उद्वत मनुष्य थे, उन सब को कडी शिक्षा दी । उसके प्रताप के डर के मारे निरंतर अनेक राजा आकर बडी बडी भेंटे सामने धरने लगे । पूर्वावस्था में जिन जिन मनुष्यों ने उस पर उपकार किया था, उन सबको अपने पास बुलाकर यथायोग्य सत्कार किया । सुकर्मी कर्मासाह को भी, उसके किये हुए निःस्वार्थ उपकार को स्मरण कर, बडे आदर के साथ कृतज्ञ बादशाह ने अपने पास बुलाने के लिये आह्वान

भेजा। साह भी आमंत्रण आते ही भेंट के लिये अनेक बहुमूल्य चीजें लेकर उसके पास पहुंचा। बहादुरशाह ने साह के सामने आते ही ऊठकर दोनों हाथों से बडे प्रेम के साथ उसका आलिङ्गन किया। अपने सभामंडल के आगे कर्मासाह की निष्कारण परोपकारिता की खूब प्रशंसा करता हुआ बोला कि – "यह मेरा परम मित्र है। जिस समय बुरी दशा ने मुझे तंग कर रखा था, तब इसी दयालु ने उससे मेरा छूटकारा करवाया था।" बादशाह के मुंह से इन शब्दों को सुनकर कर्मासाह बीच ही में एकदम बोलकर उसे आगे बोलने से बंध किया और कहा कि, "हे शहनशाह! इतना बोझा मुझ पर न रक्खें, मैं इसे ऊठाने मे समर्थ नहीं हूं। मैं तो केवल आपका एक सेवक मात्र हूं। मैंने कोई ऐसा कार्य नहीं किया है कि, जिससे आप मेरी इतनी तारीफ करें।" इस तरह परस्पर मैत्रीपूर्ण संभाषण हो चूकने पर बादशाह ने साह को ठहरने के लिए अपने शाही महल का एक सुंदर हिस्सा दिया। उसकी खातिर-तवज्जो के लिये सब प्रकार का उत्तम बन्दोबस्त किया गया। बाद में कर्मासाह देव-गुरु के दर्शन के लिये अच्छे ठाठ-पाट से जिनमंदिर और जैन उपाश्रय में गया। विधिपूर्वक देव और गुरु का दर्शन-वंदन किया। नाना प्रकार के वस्त्र, आभूषण और मिष्टान्न याचकों को दान में दिये। **श्रीसोमधीर गणि** नामक विद्वान यति वहां पर बिराजमान थे, जिनके पास कर्मासाह सदैव धर्मोपदेश सुनने और आवश्यकादि धर्मकृत्य करने के लिये जाने लगा।

इश प्रकार निरन्तर पूजा, प्रभावना और साधर्मिकवात्सल्यादि करता हुआ साह सावधान होकर बादशाह के पास रहने लगा। कुछ दिन बाद **श्री विद्यामंडनसूरि** और **विनयमंडन पाठक** को कर्मासाह ने अपने आगमनसूचक तथा बादशाह की मुलाकात वगैरह के वृत्तान्तवाले पत्र लिखे। बादशाह ने साह के पास से पहले चित्तोड में जो कुछ द्रव्य लिया था, वह सब उसने वापिस दिया। एक दिन बादशाह खुश होकर बोला कि, "हे मित्रवर! मैं तुम्हारा

क्या इष्ट कर सकूं ? मेरा दिल खुश करने के लिये मेरे राज्य में से कोई देश इत्यादि का स्वीकार करो ।" साह ने कहा, "आपकी कृपा से मेरे पास सब कुछ है । मुझे कुछ भी वस्तु नहीं चाहिए । मैं केवल एक बात चाहता हूं कि, शत्रुंजय पर्वत पर मेरे कुलदेव की स्थापना हों । उसके लिये मैंने कई कठिन अभिग्रह कर रखे हैं । यह बात मैंने पहले भी आपसे चित्रकूट में, आपके विदेश जाते समय कही थी और जिसके करने का आपने वचन भी प्रदान किया था। उस वचन के पूर्ण करने का अब समय आ गया है, इसलिये वैसा करने की आज्ञा दे ।" यह सुनकर बादशाह बोला कि, "हे साह ! तुम्हारी जो इच्छा हो वह निःशंक होकर पूर्ण करो । मैं तुम्हें अपना यह शासनपत्र (फरमान) देता हूं, जिससे कोई भी मनुष्य तुम्हारे कार्य में प्रतिबंध नहीं कर सकेंगा।" यह कहकह बादशाह ने एक शाही फरमान लिख दिया, जिसे लेकर, अच्छे मुहूर्त में कर्मासाह ने वहां (चांपानेर) से शीघ्र ही प्रयाण किया ।

बहार निकलते समय बहुत अच्छे शकुन हुए, जिन्हें देखकर कर्मासाह के आनंद का वेग बढने लगा । हाथी, घोडे और रथ पर चढे हुए अनेक संघजनों से परिवृत्त होकर रथारूढ कर्मासाह क्रमशः शत्रुंजय की ओर आगे बढने लगा । मार्ग में स्थान स्थान पर जितने जैन चैत्य आते थे, उन प्रत्येक में स्नात्र महोत्सव और ध्वजारोपण करता हुआ, जिनते उपाश्रयों में जैन साधु मिलते थे, उनके दर्शन-वंदन कर वस्त्र-पात्रादि दान देता हुआ, जितने दरिद्रलोक दृष्टिगोचर होते थे, उनको यथायोग्य द्रव्य की सहायता पहुंचाता हुआ और चीडीमार-मच्छीमार आदि हिंसक मनुष्यो को उनके पापकर्म से मुक्त करता हुआ, शत्रुंजयोद्धारक वह परम प्रभावक श्रावक स्तंभतीर्थ (खंभात) को पहुंचा ।

स्तंभनतीर्थवासी जैन समुदाय ने बडे महोत्सवपूर्वक कर्मासाह का नगर प्रवेश कराया । स्तंभनक पार्श्वनाथ और सीमंधर तीर्थंकर के मंदिरों में दर्शन

कर साह पौषधशाला (उपाश्रय) में गया । वहाँ पर श्री विनयमंडन पाठक बिराजमान थे, उनको बडे हर्षपूर्वक वंदन कर सुखप्रश्नादि पूछे। बाद में साह कहने लगा कि, "हे सुगुरु ! आज मेरा दिन सफल है, जो आपके दर्शन का लाभ मिला । भगवन् ! पहले जो आपने मुझे जिस काम के करने की सूचना की थी, उशके करने की अब स्पष्ट आज्ञा दें । आप समस्त शास्त्र के ज्ञाता और सब योग्य क्रियाओं में सावधान हैं, इसलिये मुझे जो कर्तव्य और आचरणीय हो, उसका आदेश दीजिए। लोकों में साधारण वस्तु का उद्धार-कार्य भी पुण्य के लिये होना-माना गया है, तो फिर शत्रुंजय जैसे पर्वत पर जिनेन्द्र जैसे परम पुरुष की पवित्र प्रतिमा के उद्धार का तो कहना ही क्या है ? वह तो महान अभ्युदय् (मोक्ष) की प्राप्ति करानेवाला है । पूज्य ! आप ही का किया हुआ, यह उपदेश आपके सन्मुख मैं बोल रहा हूँ, इसलिये मेरी इस धृष्टता पर क्षमा करें ।" साह के इस प्रकार बोले रहने पर पाठक जरा मुस्कुराये, परंतु उत्तर कुछ नहीं दिया । बाद में उन्हों ने यथोचित्त सारी सभा के योग्य धर्मोपदेश दिया, जिसे सुनकर सब ही खुश और उपकृत हुए। अन्त में कर्मासाह को पाठक ने कहा कि, "हे विधिज्ञ ! जो कुछ करना है, वह तुम सब जानते ही हो । हमारा तो केवल इतना ही कथन है कि, अपने कर्तव्य में शीघ्रता करो । अवसर आने पर हम भी अपने कर्तव्य का पालन कर लेंगे । शुभकार्य में कौन मनुष्य उपेक्षा करता है ?" मुनि-उचित इस प्रकार के संभाषण को सुनकर व्यंगविज्ञ कर्मासाह ने पाठक के आगमन की इच्छा को जान लिया और फिर से उनको नमस्कार कर वहां से रवाना हुआ।

पांच छ ही दिन में साह वहां पहुंचा, जहां से शत्रुंजय गिरि के दर्शन हो सकते थे । गिरिवर के दृष्टिगोचर होते ही, जिस तरह मेघ के दर्शन से मोर और चन्द्र के दर्शन से चकोर आनंदित होता है, वैसे साह भी आनंदपूर्ण हो गया । वहीं से उसने सुवर्ण और रजत के पुष्पों से तथा श्रीफलादि फलों

से सिद्धाचल को बधाया । याचकों को दान देकर संतुष्ट किया । गिरिवर को भावपूर्वक नमस्कार कर फिर इस प्रकार स्तुति करने लगा, "हे शैलेन्द्र ! इच्छित देनेवाले कल्पवृक्ष की समान बहुत काल से तेरे दर्शन किये है । तेरा दर्शन और स्पर्शन दोनों ही प्राणीयों के पाप का नाश करनेवाला हैं । ऐहिक और पारलौकिक दोनों प्रकार के सुखों के देनेवाले तेरे दर्शन किये बाद स्वर्गादिकों में भी मेरा संकल्प नहीं है । स्वर्गादि सुखों की श्रेणि के दाता और दुःख तथा दुर्गति के लिये अर्गला समान है गिरीन्द्र ! चिरकाल तक जयवान रहो ! तूं साक्षात् पुण्य का परम मंदिर है । जिनके लिये हजारों मनुष्य असंख्य कष्ट सहन करते हैं, वे चिंतामणी आदि चीजें तेरा कभी आश्रय ही नहीं छोडती हैं । तेरे एक एक प्रदेश पर अनंत आत्मा सिद्ध हुइ हैं इसलिये जगत में तेरे जैसा और कोई पुण्यक्षेत्र नहीं है । तेरे ऊपर जिनप्रतिमा हों अथवा नहीं, तू अकेला ही अपने दर्शन और स्पर्शन द्वारा लोगों के पाप का नाश करता है । सीमंधर तीर्थंकर जैसे जो भारतीय जनों की प्रशंसा करते हैं, उसमें तुझे छोडकर और कोई कारण नहीं है ।" इस प्रकार की स्तवना कर, अंजलि जोडकर पुनर्नमस्कार किया और फिर वहां से आगे चला । अपने सारे समुदाय के साथ शत्रुंजय की जड में – आदिपुर पद्या (तलहटी) में जाकर वास स्थान बनाया ।

खंभायत से विनयमंडन पाठक भी साधु और साध्वी का बहुत सा परिवार लेकर सिद्धाचल की यात्रा के उद्देश से कुछ समय बाद वहां पर पहुंचे । गुरुमहाराज के आगमन से कर्मासाह को बडा आनंद हुआ और अपने कार्य में दुगुना उत्साह हो आया । पाठकवर ने समरा आदि गोष्ठिकों को बुलाकर महामात्य वस्तुपाल के लाये हुए मम्माणी खान के दो पाषाणखंड जो भूमिगृह में गुप्त रुप से रखे हुए थे, मांगे । गोष्ठिकों के दिल को खुश और वश करने के लिये कर्मासाह ने गुरु महाराज के कथन से उनको इच्छित से भी अधिक

धन देकर वे दोनों पाषाणखंड लिये और मूर्ति बनाने का प्रारंभ किया । अपने अन्यान्य कौटुम्बिकों के कल्याणार्थ कुछ प्रतिमायें बनवाने के लिये और भी कितने ही पाषाणखंड, जो पहले के पर्वत पर पडे हुए थे, लिये । सूत्रधारों (कारीगरों) को निर्माण कार्य में योग्य शिक्षा देने के लिये, पाठकवर्य ने, वाचक विवेकमंडन और पंडित विवेकधीर नामक अपने दो शिष्यों को, जो वास्तुशास्त्र (शिल्पविद्या) के विशेषज्ञ विद्वान् थे, निरीक्षक के स्थान पर नियुक्त किये । उनके लिये शुद्ध-निर्दोष आहार-पानी लाने का काम क्षमाधीर प्रमुख मुनियों को सौंपा । और बाकी के जितने मुनि थे, वे सब संघ की शांति के लिये छट्ठ-अट्ठमादि के विशेष तप तपने लगे । रत्नसागर और जयमंडन नामके दो मुनिओ ने छमासी तप किया । व्यंतर आदि नीच देवों के उपद्रवों के शमनार्थ पाठकवर्य ने सिद्धचक्र का स्मरण करना शुरू किया । इस प्रकार वे सब धर्म के सार्थवाह तप, जप, क्रिया, ध्यान और अध्ययनरूपी अपने धर्मव्यापार में बहुत कुछ प्राप्त करते हुए रहने लगे ।

सूत्रधारों के मन को आवर्जित करने की इच्छा से कर्मासाह निरंतर उनको खाने के लिये अच्छे अच्छे भोजन और पीने के लिये गरम दूध आदि चीजें दिया करता था । पर्वत पर चढने के लिये डोलियों का भी यथेष्ट प्रबन्ध कर दिया गया था । अधिक क्या ! सेंकडों ही वे सूत्रधार जिस समय, जिस चीज की इच्छा करते थे उसे, उसी समय कर्मासाह द्वारा अपने सामने रखी हुई पाते थे । इस तरह साह की सुव्यवस्था और उदारता से आवर्जित होकर सूत्रधार भी दत्तचित्त होकर अपने काम करते थे । जब सब प्रतिमायें लगभग तैयार हो गई और मंदिर भी पूर्ण बन चूका, तब शास्त्रज्ञाता विद्वानों ने प्रतिष्ठा के मुहूर्त निर्णय करना शुरू किया ।

इसके लिये कर्मासाह ने दूर दूर से, आमंत्रण कर कर, ज्ञान और विज्ञान के ज्ञाता ऐसे अनेक मुनि, अनेक वाचनाचार्य, अनेक पंडित, अनेक पाठक,

अनेक आचार्य, अनेक ज्योतिषी बुलाये । उन सब ने एकत्र होकर अपनी कुशाग्र बुद्धि द्वारा, सूक्ष्म विवचनापूर्वक प्रतिष्ठा के शुभ और मंगलमय दिन का निर्णय किया । फिर कर्मासाह को वह दिन बताया गया और सभी ने शुभाशीर्वाद देकर कहा कि, "हे तीर्थोद्धार महापुरुष ! संवत १५८७ के वैशाख वदि ६, रविवार और श्रवण नक्षत्र के दिन जिनराज की मूर्ति की प्रतिष्ठा का सर्वोत्तम मुहूर्त है, जो तुम्हारे उदय के लिये हो ।" कर्मासाह ने, उनके इस वाक्य को हर्षपूर्वक अपने मस्तक पर चढाया और यथायोग्य उन सबका पूजन-सत्कार किया ।

मुहूर्त का निर्णय हो जाने पर कुंकुम पत्रिकायें लिख लिखकर पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण - चारों दिशाओं के जैन संघो को इस प्रतिष्ठा पर आने के लिये आमंत्रण दिये गये । आचार्य **श्रीविद्यामंडनसूरि** के आमंत्रण करने के लिये साहने अपने बडे भाई रत्नासाह को भेजा । कुंकुम पत्रिकायें पहुंचते ही चारों तरफ से, बडी बडी दूर से संघ आने लगे । अंग, बंग, कलिंग, काश्मीर, जालंधर, मालव... लाट, सौराष्ट्र, गुजरात, मगध, मारवाड और मेवाड आदि कोई भी देश ऐसा न रहा कि जहां पर कर्मासाह ने आमंत्रण न भेजा हो अथवा बिना आमंत्रण के भी जहां के मनुष्य उस समय न आने लगे हों । कहीं से हाथी पर, कहीं से घोडे पर, कहीं से रथ पर, कहीं से बेल पर, कहीं से पालखी पर और कहीं से ऊँट पर सवार होकर मनुष्यों के झुंड के झुंड शत्रुंजय पर आने लगे ।

रत्नासाह, विद्यामंडनसूरि के पास पहुंचा और हर्षपूर्वक नमस्कार तथा स्तवना कर गिरिराज की प्रतिष्ठा पर चलने के लिये संघ के सहित आमंत्रण किया । सूरिजी ने कहा, "हे महाभाग ! पहले तुमने जब चित्तोड पर पार्श्वनाथ और सुपार्श्वनाथ का अद्भूत मंदिर बनवाया था, तब भी तुमने हमको आमंत्रण दिया था, लेकिन किसी प्रतिबंध के कारण हम तब न आ सके और हमारे

शिष्य विवेकमंडन ने उस की प्रतिष्ठा की थी। लेकिन शत्रुंजय की यात्रा के लिये तो पहले ही से हमारा मन उत्कंठित हो रहा है और फिर जिसमें यह तुम्हारा प्रेमपूर्ण आमंत्रण हुआ, इसलिये अब तो हमारा आगमन हों, इसमें कहने की बात ही क्या है ?" यह कहकर, सौभाग्यरत्नसूरि आदि अपने विस्तृत शिष्य परिवार से परिवृत्त होकर सूरिजी रत्नासाह के साथ, शत्रुंजय की ओर रवाना हुए। वहां का स्थानिक संघ भी सूरिजी के साथ हुआ। अन्यान्य संप्रदाय के भी सेंकडो ही आचार्य और हजारों ही साधु-साध्वियों का समुदाय, विद्यामंडनसूरि के संघ में सम्मिलित हुआ और क्रमशः शत्रुंजय पहुंचा। कर्मासाह बहुत दूर तक सूरिजी के सन्मुख आया और बडी धामधूम से प्रवेशोत्सव कर उनका स्वागत किया। गिरिराज की तलहटी में जाकर सबने वासस्थान बनाया। अन्यान्य देश-प्रदेशों से भी अगणित मनुष्य इसी तरह वहां पर पहुंचे। लाखों मनुष्यो के कारण शत्रुंजय की विस्तृत अधोभूमि भी संकुचित होती हुई मालूम देने लगी। लेकिन ज्यों ज्यों जनसमूह की वृद्धि होती जाती थी, त्यों त्यों कर्मासाह का उदार हृदय विस्तृत होता जाता था। आये हुए उन् सब संघजनों को खान, पान, मकान, वस्त्र, सन्मान और दान दे देकर शक्तिमान कर्मासाह ने अपनी उत्तम संघभक्ति प्रकट की। दरिद्र से लेकर महान श्रीमन्त तक के सभी संघजनों की उसने एक सी भक्ति की। किसी को, किसी बात की न्यूनता न रहने दी।

श्री विनयमंडन पाठक की सर्वावसर सावधानता और सर्वकार्यकुशलता देखकर, प्रतिष्ठाविधि के कुलकार्यों का मुख्य अधिकार, सभी आचार्य और प्रमुख श्रावक एकत्र होकर, उन्हें समर्पित किया। बाद में, गुरुमहाराज के वचन से अपने कुलगुरु आदि को की यथेष्ट दान द्वारा सम्यग् उपासना कर और सबकी अनुमति पाकर कर्मासाह अपने विधिकृत्य में प्रविष्ट हुआ। जब जब पाठकजी ने साह से द्रव्य व्यय करने को कहा तब तब सौ की जगह हजार

देनेवाले उस उदार पुरुष ने बडी उदारतापूर्वक धन वितीर्ण किया । जलयात्रा के दिन जो महोत्सव कर्मासाह ने किये थे, उन्हें देखकर लोक शास्त्रवर्णित भरतादिकों के महोत्सवों की कल्पना करने लगे थे ।

प्रतिष्ठा के मुहूर्तवाले दिन, स्नात्र प्रमुख सब विधि के हो जाने पर, जब लग्नसमय प्राप्त हुआ तब, सर्वत्र मंगल ध्वनि होने लगी । सब मनुष्य विकथा वगैरह का त्याग कर प्रसन्न मनवाले हुए । श्राद्धगण में भक्ति का अपूर्व उल्लास फैलने लगा । विकसित वदन और प्रफुल्लित नयन वाली स्त्रियां मंगलगीत गाने लगी । खूब जोर से वाजित्र बजने लगे । हजारों भावुक लोग आनंद और भक्ति के वश होकर नृत्य करने लगे । सब मनुष्य एख ही दिशा में-एक ही वस्तु तरफ निश्चल नेत्र से देखने लगे । अनेक लोग हाथ में धूपदान लेकर धूप ऊडाने लगे । कुमकुम और कर्पूर का मेघ बरसाने लगे । बंदीजन अविश्रान्त रूप से बिरुदावली बोलने लगे । ऐसे मंगलमय समय में, भगवन्मूर्ति का जब दिव्य स्वरूप दिखाई देने लगा, तब कर्मासाह की प्रार्थना से और जैन प्रजा की कल्याणाकांक्षा से, राग-द्वेष विमुक्त होकर श्रीविद्यामंडनसूरि ने समग्र सूरिवरों की अनुमति पाकर, शत्रुंजयतीर्थपति श्री आदिनाथ भगवान की मंगलकर प्रतिष्ठा की । उनके और शिष्यों ने अन्य जो सब मूर्तियें थी, उनकी प्रतिष्ठा की । विद्यामंडनसूरि बडे नम्र और लघुभाव को धारण करनेवाले थे, इसलिये ऐसा महान कार्य करने पर भी उन्होंने कहीं पर अपना नाम नहीं खुदवाया । प्राय: उनके बनाये हुए जितने स्तवन है, उनमें भी उन्हों ने अपना नाम नहीं लिखा ।

किसी भी मनुष्य को उस कल्याणप्रद समय में कष्ट का लेशमात्र भी अनुभव न हुआ । अपने कार्य में कृतकृत्य हो जाने से कर्मासाह के आनंद का तो कहना ही क्या है, परन्तु उस समय औरों के चित्त में भी आनंद का आवेश नहीं समाने लगा । केवल लोक ही कर्मासाह को इस कार्य करने से

धन्य नही समझने लगे, किन्तु स्वयं वह आप भी अपने को धन्य मानने लगा। उस समय भगवन्मूर्ति को, उसकी प्रतिष्ठा करनेवाले विद्यामंडनसूरि को और तीर्थोद्धारक पुण्यप्रभावक कर्मासाह को-तीनों को एक ही साथ सब लोक पुष्प-पुंजो और अक्षत-समूहों से बधाने लगे। हजारों मनुष्य सर्व प्रकार के आभूषणों से कर्मासाह का न्युंछन कर याचकों को देने लगे। मंदिर के शिखर पर सुन्ने ही के कलश और सुवर्ण ही का ध्वजादंड, जिसमें बहुत से मणि जडे हुए थे, स्थापित किया गया। बाद में, सूरिवर ने साह के ललाटतल पर अपने हाथ से, विजयतिलक की तरह, संघाधिपत्य का तिलक किया और इन्द्रमाला पहनाई। मंदिर में निरंतर काम में आने लायक आरती, मंगलदीपक, छत्र, चामर, चंद्रोए, कलश और रथ आदि सुन्ने-चांदी की सब चीजें अनेक संख्या में भेट की। कुछ गांव भी तीर्थ के नाम पर चढाये। सूर्योदय से लेकर सांयकाल तक कर्मासाह का भोजनगृह सतत खुल्ला रहता था। जैन-अजैन कोई भी मनुष्य के लिये किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं था। पैर पैर पर साह ने क्या याचक और क्या अयाचक सबका सत्कार किया। सेंकडों ही हाथी, घोडे और रथ, सुवर्णाभरणों से भूषित कर कर अर्थीजनों को दे दिये। ज्यों ज्यों याचक गण उसके सामने याचना करते थे, त्यों त्यों उसका चित्त प्रसन्न होता जाता था। कभी किसी ने उसके वदन, नयन और वचन में किसी तरह का विकारभाव न देखा।

तदनन्तर, जितने सूत्रधार (कारीगर) थे, उन सबको सुवर्ण का यज्ञोपवित, सुवर्म मुद्रा, बाजुबन्ध, कुण्डल और कंकण आदि बहूमूल्य आभरण तथा उत्तम वस्त्र देकर सत्कृत किये। अपने जितने साधर्मिक बंधु थे, उनका भी यथायोग्य धन, वस्त्र, अशन, पान, वाहन और प्रिय वचन द्वारा विनयवान् साहने पूर्ण सत्कार किया। मुमुक्षु वर्ग जितना था, उसे भी वस्त्र, पात्र और पुस्तकादि धर्मोपकरण प्रदान कर अगणित धर्मलाभ प्राप्त किया। इनके सिवा

आबाल-गोपाल पर्यंत के वहां के कुल मनुष्यों को भी स्मरण कर कर उस दानवीर ने अन्न और वस्त्र का दान दे देकर सन्तुष्ट किया ।

विशाल हृदय और उदार चित्तवाले कर्मासाह ने इस प्रकार सर्व मनुष्यों को आनंदित और सन्तुष्ट कर अपने अपने देश में जाने के लिये विसर्जित किये । आप थोडे से दिन तक, अवशिष्ट कार्यो की समाप्ति के लिये, वही ठहरा ।

जिस भगवत्प्रतिमा के दर्शन करने के लिये प्रत्येक मनुष्य को सौ सौ रुपये टेक्स (कर) के देने पडते थे और जिसमें भी केवल एक ही बार, क्षणमात्र, दर्शन कर पाते थे, उसी मूर्ति के, पुण्यशाली कर्मासाह ने अपने पास से सुवर्ण के ढेर के ढेर राजा को देकर, लाखों-करोंडों मनुष्यो को बिना कोडी के खर्च किये, महिनों तक पूर्ण शांति के साथ पवित्र दर्शन कराये । सुकर्मी संघपति कर्मासाह की इस पुण्यराशी का कौन वर्णन कर सकता है ?

श्रीविद्यामंडनसूरि की आज्ञा को मस्तक पर धारण कर उनके वशवर्ती शिष्य विवेकधीर ने संघनायक श्री कर्मासाह के महान उद्धार की यह प्रशस्ति बनाई है । इसमें जो कुछ दोषकणिकायें दृष्टिगोचर हो, उन्हें दूर कर निर्मत्सर मनुष्य इसका अध्ययन करें ऐसी विज्ञप्ति है । इस प्रबन्ध के बनाने से मुझे जो पुण्य प्राप्त हुआ है, उससे जन्म-जन्मान्तरों में सम्यग्दर्शन, ज्ञान ओर चारित्र की मुझे प्राप्ति हो, यही मेरी एक केवल परम अभिलाषा है । जब तक जगत में सुर-नरों की श्रेणि से पूजित शत्रुंजय पर्वत विद्यमान रहें, तब तक कर्मासाह के उद्धार का वर्णन करनेवाली यह प्रशस्ति भी विद्वानों द्वारा सदैव पढी जाती हुई विद्यमान रहें । वैशाख वदी सप्तमी और सोमवार के (प्रतिष्ठा के दूसरे) दिन यह प्रबन्ध रचा गया है और श्री विनयमंडन पाठक की आज्ञा से सौभाग्यमंडन नामक पंडित ने दशमी और और गुरुवार के दिन इसकी पहली प्रति लीखी है ।

कविवर लावण्यसमय की प्रशस्ति के अनुसार कर्मासाह का कौटुम्बिक परिवार ।

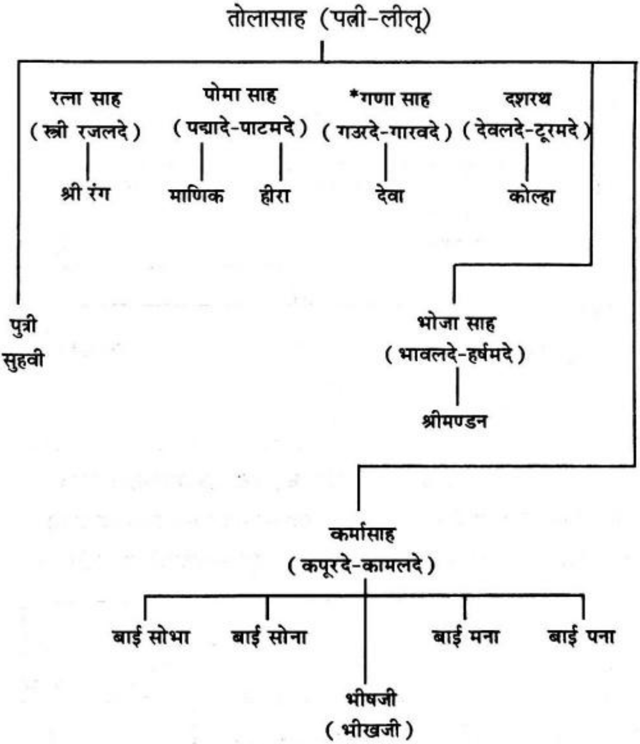

[* विवेकधीर गणि ने प्रबन्ध में पांच ही भाईयों का उल्लेख किया है। गणासाह का नाम नहीं लिखा। ईससे ज्ञात होता है कि प्रतिष्ठा के समय गणा साह विद्यमान न होगा। इसके पहले ही उसका स्वर्गवास हो गया होगा।]

शत्रुंजय तीर्थोद्धार के प्रतिष्ठाता सूरिवर का वंशवृक्ष

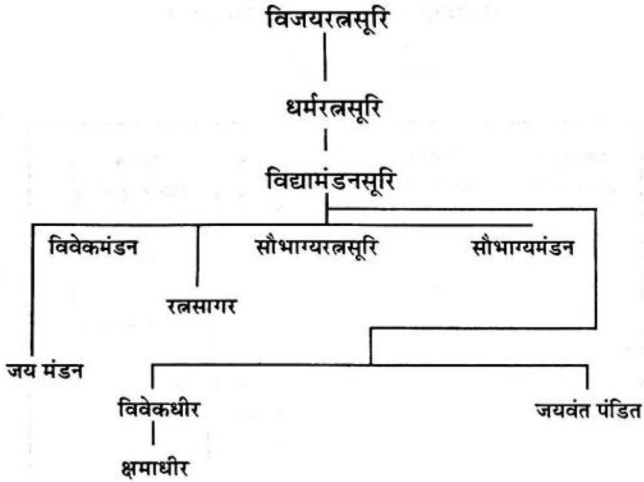

सं० १५८७, चैत्र वदि ६, रवौ श्रवणनक्षेत्रे दो० करमाकारितः शत्रुंजयोद्धारः । उपाध्यायश्रीविनमंडनसाहाय्यात् भट्टारकश्रीविद्यामंडनसूरिभिः प्रतिष्ठिता मूलनायकप्रतिमा इति ॥

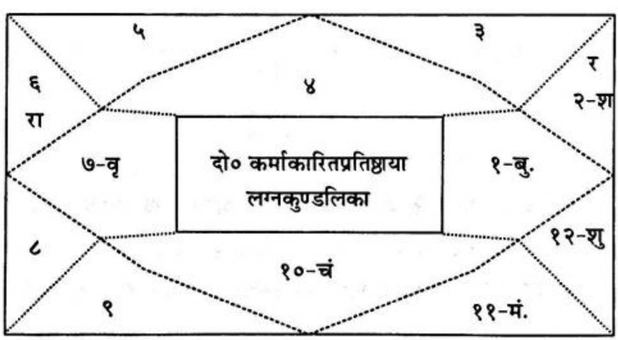

किसने इस शुभ कर्म के करनेवाले कर्मासाह का निर्माण किया ?
उस (कर्मासाह) के द्वारा किये गये शुभ कार्यों को जिन्होनें देखा है, जो सद्भागी बने है, उन कार्यो को देखने के लिए, वे सचमुच पुण्यशाली है।
(यहां एक पंक्ति की गुनगुनाहट होंठों पर चली आती है :

'तब आपको जिन्होने देखा होगा वे भी धन्य है ।'

(कर्मासाह के लिए प्रतिष्ठा-प्रशस्ति में से)

जिसने इस परम् पवित्र पुंडरीकगिरि पर्वत पर जिनालयों का जीर्णोद्धार करवाया, उसने तो सचमुच अपनी विशद बुद्धि से दुर्गति से अपनी आत्मा का उद्धार किया ।

जिसने श्रेष्ठ विधि के साथ तीर्थनाथ की प्रतिष्ठा को उसने तो तीन भुवन (स्वर्ग-मनुष्य एवं पाताललोक) में स्वयं को प्रतिष्ठापित कर दिया।

(कर्मासाह के लिए : प्रतिष्ठा-प्रशस्ति में से)

"नालिखंश्च कुत्रापि हि नामनिजं गंभीरहृदयास्ते"

महामहिम आचार्य भगवंत श्री विद्यामंडनसूरिजीने प्रतिष्ठा के समय कहीं पर भी अपना नाम नहीं लिखा । अपितु प्रतिष्ठा करनेवालों के रुप में लिखाः **'प्रतिष्ठितं श्री सूरिभिः'**

निकटमोक्षगामी उन महान आचार्य भगवंत के संयमतपोमय ऊर्जा के प्रभाव से कहा जाता है कि प्रतिष्ठा के समय समीपस्थ व्यंतरदेवने प्रतिमा में प्रविष्ट होकर ७ बार श्वास लिए । उपस्थित जन समूह ने इसे देखा भी सही । शायद वो क्षण इतनी पुण्यवती थी कि वही प्रतिष्ठा आज भी अखंड है । अक्षुण्ण है । अविचल है ।

'धन धन शासन मंडन सूरिवरा ।'

तीर्थ व्यवस्था, सलाह सूचन, दान-सहयोग, जीवदया, पांजरापोल, जीर्णोद्धार वगैरह प्रवृत्तियों के लिए पेढी के संपर्क सूत्र

शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट
श्रेष्ठि लालभाई दलपतभाई भवन,
२५, वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड, पालडी, अहमदाबाद-३८० ०२७
फोन : (०७९) २६६४४५०२, २६६४५४३०
समय : सुबह ११ से १-३० व् दोपहर २ से ३-३०
Telefax : 079-266082441 • Email : shree_sangh@yahoo.com
(रविवार एवं अवकाश के अतिरिक्त)

शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट
पटनी की खड़की, झवेरीवाड, अहमदाबाद-३८० ००१
समय : सुबह ११ से १-३० व दोपहर २ से ३-३० तक
फोन : (०७९) २५३५६३१९
(रविवार एवं अवकाश के अतिरिक्त)

श्री कयवनभाई हेमेन्द्रभाई संघवी
विश्रुत जेम्स, ७०१-२ ए अमन चेम्बर्स ७वा माला,
ओपेरा हाउस, मुम्बई-४०० ००४
फोन : (०२२) ३२९६१८७०
समय : दोपहर १२ से ५ (अवकाश दिनों के अतिरिक्त)

शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट
श्री रजनीशांति मार्ग, पालीताणा-३६४ २७०
ओपेरा हाउस, मुम्बई-४०० ००४
Tele : 02848–252148, 253656
समय : सुबह ९ से १२.३० दोपहर २.३० से ७

और अंत में

आपको 'श्री आनंदकल्याण' का यह अंक अच्छा लगा ? क्या अच्छा लगा ? कुछ पसंद न भी आया हो तो वह भी हमें खुले मन से पर खुरदरी नहीं अपितु नरम कलम से लिख भेजें । हमें अवश्य अच्छा लगेगा । पत्रव्यवहार के लिए ई-मेईल माध्यम इच्छनीय एवं उपयुक्त रहेगा ।
anandkalyanmagazine@gmail.com

उद्देश्य

- ५०० वीं सालगिरह के प्रसंग में छोटी योजना द्वारा हर एक श्रावक-श्राविका को सहभागी बनने का अमूल्य अवसर।
- ५००वीं सालगिरह का अद्भूत एवम् अद्वितीय प्रसंग आयोजन।
- इस फंड में से सात क्षेत्र एवं जीवदया-अनुकम्पा ईत्यादि कार्यों का आयोजन।
- इस निधि में आप स्वयं व्यक्तिगत लाभ ले कर दादा की भक्ति के लाभार्थी बनें एवम् परिवार की हर एक व्यक्ति को इसमें जोडें।
- राशि हर साल रु. ३६० या एक साथ में १५ सालके रु. ५४०० के रूप में जमा करा सकते है।
- राशि जमा करने का फोर्म
  शेठ आणंदजी कल्याणजी पेढी
  संचालित सभी तीर्थों मे उपलब्ध है
- www.anandjikalyanjipedhi.org वेबसाईट
  पर से भी डाउनलोड कर सकेंगे।
- मोबाईल एप्लीकेशन के द्वारा ओनलाईन
  भी राशि जमा करा सकेंगे।

आप स्वयं सुकृत का लाभ ले
एवम् दूसरों के लिए प्रेरणास्त्रोत बनें।

श्री शत्रुंजय तीर्थाधिपति

श्री आदिनाथ दादा की ५००वीं सालगिरह

MISSION 500
SUVARNA MAHOTSAV CELEBRATION

संवत २०८७ वैशाख वद-६.
सोमवार दिनांक १२-०५-२०३१

BOOK - POST

To,

श्री आनंद कल्याण (त्रिमासिक पत्र)

श्रेष्ठी लालभाई दलपतभाई भवन, २५, वसंतकुंज,
नवा शारदा मंदिर रोड, पालडी, अहमदाबाद - ३८० ००७.
E-mail : anandkalyanmagazine@gmail.com